वह सर्वआश्चर्यमय रूप दिव्य प्रकाशवान् भूषणों और नाना प्रकार के परिधानों से अलंकृत था। उन्होंने दिव्य माला धारण कर रखी थी और हाथों में अनेक दिव्य शस्त्र उठाये हुए थे तथा उनका विग्रह विविध सुगन्धों से उपलिप्त था। अधिक क्या, वह रूप परम उज्ज्वल, सर्वव्यापक एवं अनन्त था। अर्जुन ने यह सब साक्षात् देखा।।१०-११।।

तात्पर्य

इन दो श्लोकों से स्पष्ट है कि श्रीभगवान् के हाथ, मुख, चरण आदि की इयत्ता नहीं है। उनके नाना प्रकार के अनन्त रूप सम्पूर्ण जगत् में परिव्याप्त हैं। परन्तु उनकी निरवधि कृपा से अर्जुन को एक ही स्थान में उन सब का साक्षात्कार हो गया। यह श्रीकृष्ण की अचिन्त्य शक्ति का अप्रतिम प्रभाव ही था।

दिवि सूर्यसहस्त्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।१२।।

दिवि=आकाश में; **सूर्य**=सूर्य; **सहस्त्रस्य**=हजारों; **भवेत्**=हों; **युगपत्**=एक-साथ; **उत्थिता**=उदय; **यदि**=यदि; **भाः**=प्रकाश; **सदृशी**=उसके समान; **सा**=वह (प्रकाश); **स्यात्**=(कदाचित् ही) होगा; **भासः**=तेज; **तस्य**=उन; **महात्मनः**=श्रीभगवान् का।

अनुवाद

यदि आकाश में हजारों सूर्यों का एक साथ उदय हो तो उन से उत्पन्न प्रकाश भी श्रीभगवान् के उस विश्वरूप के तेज के समान कदाचित् ही हो।।१२।।

तात्पर्य

अर्जुन ने जो कुछ देखा, वह वस्तुतः अनिर्वचनीय है। फिर भी, संजय धृतराष्ट्र के आगे उस महान् तत्त्व-प्रकाश का शब्दचित्र प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा है। वास्तविक स्थल पर न तो संजय उपस्थित था और न धृतराष्ट्र ही था; श्रीव्यास देव की कृपा से प्राप्त दिव्यदृष्टि के द्वारा ही संजय समूचे घटनाचक्र को देख सका। अतएव वस्तुस्थिति का बोध कराने के लिए वह उसे हजारों सूर्यों के उदय होने जैसी घटना की उपमा दे रहा है, जो सहज कल्पना का विषय है।

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा।।१३।।

तत्र=वहाँ; **एकस्थम्**=एक जगह स्थित; **जगत्**=ब्रह्माण्ड को; **कृत्स्नम्**=संपूर्ण; **प्रविभक्तम्**=विभाजित हुये; **अनेकधा**=अनेक प्रकार से; **अपश्यत्**=देखा; **देवदेवस्य**=भगवान् के; **शरीरे**=कलेवर में; **पाण्डवः**=अर्जुन ने; **तदा**=उस काल में।

अनुवाद

पाण्डुपुत्र अर्जुन ने उस समय अनेक प्रकार से विभक्त सम्पूर्ण जगत् को भगवान् श्रीकृष्ण के उस कलेवर में एक स्थान पर स्थित देखा।।१३।।